बी० ए० भाग-3
हिन्दी-प्रतिष्ठा
'रस निष्पत्ति'

रमेश कुमार यादव
हिन्दी- विभाग
डी० के० कालेज डुमरॉव
बक्सर (बिहार)

रस निष्पत्ति की अवधारणा —

भरत के सूत्र- "विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद्रसनिष्पत्तिः" में प्रयुक्त 'संयोग' और 'निष्पत्ति' शब्द मुख्यतः विवाद के विषय रहे है। संस्कृत साहित्य में अपने विभिन्न दर्शनों की पृष्ठभूमि में विभिन्न आचार्यों ने इन प्रश्नों के उत्तर विभिन्न ढंगों से दिए हैं। इस सूत्र की लगभग 11 आचार्यों ने अच्छी व्याख्याएं की है जिनमें चार प्रमुख हैं। वे हैं - भट्टलोल्लट, शंकुक, भट्टनायक और अभिनवगुप्त। इनमें अभिनवगुप्त द्वारा रचित 'अभिनव भारती' इसलिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है क्योंकि इसी ग्रंथ में शेष तीनों आचार्यों की धारणाओं का उल्लेख है और इसी आधार पर हम उनके विचारों से परिचित हो पाते हैं।

भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद या आरोपवाद -

वेदान्तमत के अनुयायी आचार्य भट्टलोल्लट (नवीं सदी) ने भरत के रस-सूत्र की व्याख्या अपने ढंग से की। उनके अनुसार संयोग का अर्थ है संबंध। स्थायीभाव अनुपचित (अपरिपक्व) अवस्था में ही होता है। वह उपचित अर्थात परिपक्व होकर ही रस के रूप में परिणत होता है। उपचय या उपचिति एक संयुक्त प्रक्रिया है जिसमें उत्पत्ति, प्रतीति और पुष्टि का अंतर्भाव रहता है। तात्पर्य यह है कि स्थायी उपचेय है और विभावादि उपचायक। इस प्रकार स्थायी भाव और विभाव में उत्पाद्य उत्पादक, स्थायी भाव और अनुभाव में गम्य - गमक तथा स्थायी भाव और संचारी में पोष्य - पोषक संबंध होता है।

निष्पत्ति का अर्थ है उत्पत्ति। यह लोल्लट के अनुसार इसकी व्याख्या का भाव यह है कि वास्तव में रसानुभूति अनुकार्यों में होती है। जिनका अभिनेता अभिनय करता है उन वास्तविक चरित्रों में रस की स्थिति थी। परन्तु अभिनेता की तदनुरूप वेश-भूषा के कारण एवं उसके कुशल अंग-संचालन, अभिनय, वार्तालाप आदि के सहारे दर्शक या सामाजिक, अभिनेता में वास्तविक चरित्र का आरोप कर लेता है। आरोप करने के कारण सामाजिक में भी रस की अनुभूति होती है। आरोप की बात मानने के कारण इनके मत को आरोपवाद भी कहा जाता है। निष्कर्ष यह है कि -

1. स्थायी भाव उपचित होकर रस में परिणत होता है।
2. रस व्यक्तिनिष्ठ है- मुख्य रूप से अनुकार्य में रहता है, रामादि का है। वेश-भूषा आदि के कारण सामाजिक नट की क्रियाओं को राम की क्रियाएं समझ लेता है।
3. इसमें नट भी रस का आस्वाद लेता है।
4. सामाजिक, नाट्य प्रयोग में कहीं नहीं आता है। वह दूर से ही रस की प्रतीति करता है।

आचार्य शंकुक का अनुमितिवाद :-

रस निष्पत्ति के दूसरे बड़े आचार्य शंकुक (नवी सदी) हैं। आचार्य शंकुक के मत में हमें भट्टलोल्लट के मत के परिष्कार का प्रयत्न दिखाई पड़ता है। उनके सिद्धांत को अनुमितिवाद कहा जाता है। शंकुक के अनुसार स्थायीभाव तो वास्तव में नायकादि अनुकार्यों में रहता है, पर वही अनुकृत होने पर रस की संज्ञा धारण करता है।

अभिनेता के द्वारा अनुकृत नायकादि का स्थायी भाव अनुमान के द्वारा समाज को जो आनंद प्राप्त करता है, वह रस कहलाता है। लोल्लट की भांति यहां अभिनेताओं में नायकादि पात्रों के आरोप के कारण रस की प्रतीति नहीं है वरन् वह प्रेक्षकों या सामाजिकों का एक प्रकार का आनंद है जिसका आधार है-अनुमान।

शंकुक ने इस प्रक्रिया की पुष्टि 'चित्र तुरंग न्याय' से की है। चित्र में लिखे घोड़े को देख कर अनुमान के द्वारा हम उसे घोड़े के रूप में ही समझ लेते हैं और उससे संबंधित ज्ञान जाग्रत होता है, उसी प्रकार सामाजिक, अभिनेताओं को रामादि न मानते हुए 'चित्र तुरंग न्याय' के आधार पर रामादि अनुकार्यों की बातों का अनुभव करने लगता है।

संक्षेप में शंकुक का अभिप्राय निम्नलिखित है-

1. नटगत अभिनय कृत्रिम होता है पर सुखद भ्रम के कारण कृत्रिम नहीं लगता।
2. स्थायीभाव तो वास्तव में नायकादि अनुकार्यों में रहता है पर वही अनुकृत होने पर रस की संज्ञा धारण करता है 'भावानुकरणं रस'।
3. नट में रामत्व की प्रतीति 'चित्र तुरंग न्याय' से होती है अर्थात् यह कृत्रिम प्रतीति है जो विलक्षण है।

इस तरह, अनुमितिवाद, आरोपवाद से एक कदम आगे बढ़कर रसानुभूति की प्रक्रिया को उद्घाटित करने का प्रयत्न करता है। शंकुक के मत का खण्डन भट्टतौत ने किया है। उनके अनुसार अनुमान से रसानुभूति संभव नहीं है। धुएं को दूर से देखकर अग्नि का अनुमान किया जा सकता है किन्तु धुएं की गर्मी